रामचरित्मानस

बालकाण्ड

विश्वामित्र का राजा दशरथ से राम-लक्ष्मण को माँगना, ताड़का वध

दोहा :

*** ब्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप। भगत हेतु नाना बिधि करत चरित्र अनूप॥205॥

भावार्थ:

-जो व्यापक, अकल (निरवयव), इच्छारहित, अजन्मा और निर्गुण है तथा जिनका न नाम है न रूप, वही भगवान भक्तों के लिए नाना प्रकार के अनुपम (अलौकिक) चरित्र करते हैं॥205॥

चौपाई :

*** यह सब चरित कहा मैं गाई। आगिलि कथा सुनहु मन लाई॥ बिस्वामित्र महामुनि ग्यानी। बसहिं बिपिन सुभ आश्रम जानी॥1॥

भावार्थ:

-यह सब चरित्र मैंने गाकर (बखानकर) कहा। अब आगे की कथा मन लगाकर सुनो। ज्ञानी महामुनि विश्वामित्रजी वन में शुभ आश्रम (पवित्र स्थान) जानकर बसते थे,॥1॥

*** जहँ जप जग्य जोग मुनि करहीं। अति मारीच सुबाहुहि डरहीं॥ देखत जग्य निसाचर धावहिं। करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं॥2॥

भावार्थ:

-जहाँ वे मुनि जप, यज्ञ और योग करते थे, परन्तु मारीच और सुबाहु से बहुत डरते थे। यज्ञ देखते ही राक्षस दौड़ पड़ते थे और उपद्रव मचाते थे, जिससे मुनि (बहुत) दुःख पाते थे॥2॥

*** गाधितनय मन चिंता ब्यापी। हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी॥ तब मुनिबर मन कीन्ह बिचारा। प्रभु अवतरेउ हरन महि भारा॥3॥

भावार्थ:

-गाधि के पुत्र विश्वामित्रजी के मन में चिन्ता छा गई कि ये पापी राक्षस भगवान के (मारे) बिना न मरेंगे। तब श्रेष्ठ मुनि ने मन में विचार किया कि प्रभु ने पृथ्वी का भार हरने के लिए अवतार लिया है॥3॥

***एहूँ मिस देखौं पद जाई। करि बिनती आनौं दोउ भाई॥ ग्यान बिराग सकल गुन अयना। सो

प्रभु मैं देखब भरि नयना॥4॥

भावार्थ:

-इसी बहाने जाकर मैं उनके चरणों का दर्शन करूँ और विनती करके दोनों भाइयों को ले आऊँ। (अहा!) जो ज्ञान, वैराग्य और सब गुणों के धाम हैं, उन प्रभु को मैं नेत्र भरकर देखूँगा॥4॥

दोहा :

*** बहु बिधि करत मनोरथ जात लागि नहिं बार। करि मज्जन सरऊ जल गए भूप दरबार॥206॥

भावार्थ:

-बहुत प्रकार से मनोरथ करते हुए जाने में देर नहीं लगी। सरयूजी के जल में स्नान करके वे राजा के दरवाजे पर पहुँचे॥206॥

चौपाई :

*** मुनि आगमन सुना जब राजा। मिलन गयउ लै बिप्र समाजा॥ करि दंडवत मुनिहि सनमानी। निज आसन बैठारेन्हि आनी॥1॥

भावार्थ:

-राजा ने जब मुनि का आना सुना, तब वे ब्राह्मणों के समाज को साथ लेकर मिलने गए और दण्डवत् करके मुनि का सम्मान करते हुए उन्हें लाकर अपने आसन पर बैठाया॥1॥

*** चरन पखारि कीन्हि अति पूजा। मो सम आजु धन्य नहिं दूजा॥ बिबिध भाँति भोजन करवावा। मुनिबर हृदयँ हरष अति पावा॥2॥

भावार्थ:

-चरणों को धोकर बहुत पूजा की और कहा- मेरे समान धन्य आज दूसरा कोई नहीं है। फिर अनेक प्रकार के भोजन करवाए, जिससे श्रेष्ठ मुनि ने अपने हृदय में बहुत ही हर्ष प्राप्त किया॥2॥

***पुनि चरननि मेले सुत चारी। राम देखि मुनि देह बिसारी॥ भए मगन देखत मुख सोभा। जनु चकोर पूरन ससि लोभा॥3॥

भावार्थ:

-फिर राजा ने चारों पुत्रों को मुनि के चरणों पर डाल दिया (उनसे प्रणाम कराया)। श्री रामचन्द्रजी को देखकर मुनि अपनी देह की सुधि भूल गए। वे श्री रामजी के मुख की शोभा देखते ही ऐसे मग्न हो गए, मानो चकोर पूर्ण चन्द्रमा को देखकर लुभा गया हो॥3॥

*** तब मन हरषि बचन कह राऊ। मुनि अस कृपा न कीन्हिहु काऊ॥ केहि कारन आगमन तुम्हारा। कहहु सो करत न लावउँ बारा॥4॥

भावार्थ:

-तब राजा ने मन में हर्षित होकर ये वचन कहे- हे मुनि! इस प्रकार कृपा तो आपने कभी नहीं की। आज किस कारण से आपका शुभागमन हुआ? कहिए, मैं उसे पूरा करने में देर नहीं लगाऊँगा॥4॥

*** असुर समूह सतावहिं मोही। मैं जाचन आयउँ नृप तोही॥ अनुज समेत देहु रघुनाथा। निसिचर बध मैं होब सनाथा॥5॥

भावार्थ:

-(मुनि ने कहा-) हे राजन्! राक्षसों के समूह मुझे बहुत सताते हैं इसीलिए मैं तुमसे कुछ माँगने आया हूँ। छोटे भाई सहित श्री रघुनाथजी को मुझे दो। राक्षसों के मारेजाने पर मैं सनाथ (सुरक्षित) हो जाऊँगा॥5॥

दोहा :

*** देहु भूप मन हरषित तजहु मोह अग्यान। धर्म सुजस प्रभु तुम्ह कौं इन्ह कहँ अति कल्यान॥207॥

भावार्थ:

-हे राजन्! प्रसन्न मन से इनको दो, मोह और अज्ञान को छोड़ दो। हे स्वामी! इससे तुमको धर्म और सुयश की प्राप्ति होगी और इनका परम कल्याण होगा॥207॥

चौपाई :

*** सुनि राजा अति अप्रिय बानी। हृदय कंप मुख दुति कुमुलानी॥ चौथेंपन पायउँ सुत चारी। बिप्र बचन नहिं कहेहु बिचारी॥1॥

भावार्थ:

-इस अत्यन्त अप्रिय वाणी को सुनकर राजा का हृदय काँप उठा और उनके मुख की कांतिफीकी पड़ गई। (उन्होंने कहा-) हे ब्राह्मण! मैंने चौथेपन में चार पुत्र पाए हैं, आपने विचार कर बात नहीं कही॥1॥

*** मागहु भूमि धेनु धन कोसा। सर्बस देउँ आजु सहरोसा॥ देह प्रान तें प्रिय कछु नाहीं। सोउ मुनि देउँ निमिष एक माहीं॥2॥

भावार्थ:

-हे मुनि! आप पृथ्वी, गो, धन और खजाना माँग लीजिए, मैं आज बड़े हर्ष के साथ अपना सर्वस्व दे दूँगा। देह और प्राण से अधिक प्यारा कुछ भी नहीं होता, मैं उसे भी एक पल में दे दूँगा॥2॥

*** सब सुत प्रिय मोहि प्रान की नाईं। राम देत नहिं बनइ गोसाईं॥ कहँ निसिचर अति घोर कठोरा। कहँ सुंदर सुत परम किसोरा॥3॥

भावार्थ:

-सभी पुत्र मुझे प्राणों के समान प्यारे हैं, उनमें भी हे प्रभो! राम को तो (किसी प्रकार भी) देते नहीं बनता। कहाँ अत्यन्त डरावने और क्रूर राक्षस और कहाँ परम किशोर अवस्था के (बिलकुल सुकुमार) मेरे सुंदर पुत्र! ॥3॥

*** सुनि नृप गिरा प्रेम रस सानी। हृदयँ हरष माना मुनि ग्यानी॥ तब बसिष्ट बहु बिधि समुझावा। नृप संदेह नास कहँ पावा॥4॥

भावार्थ:

-प्रेम रस में सनी हुई राजा की वाणी सुनकर ज्ञानी मुनि विश्वामित्रजी ने हृदय मेंबड़ा हर्ष माना। तब वशिष्ठजी ने राजा को बहुत प्रकार से समझाया, जिससे राजा का संदेह नाश को प्राप्त हुआ॥4॥

*** अति आदर दोउ तनय बोलाए। हृदयँ लाइ बहु भाँति सिखाए॥ मेरे प्रान नाथ सुत दोऊ। तुम्ह मुनि पिता आन नहिं कोऊ॥5॥

भावार्थ:

-राजा ने बड़े ही आदर से दोनों पुत्रों को बुलाया और हृदय से लगाकर बहुत प्रकारसे उन्हें शिक्षा दी। (फिर कहा-) हे नाथ! ये दोनों पुत्र मेरे प्राण हैं। हे मुनि! (अब) आप ही इनके पिता हैं, दूसरा कोई नहीं॥5॥

दोहा :

*** सौंपे भूप रिषिहि सुत बहु बिधि देइ असीस। जननी भवन गए प्रभु चले नाइ पद सीस॥208 क॥

भावार्थ:

-राजा ने बहुत प्रकार से आशीर्वाद देकर पुत्रों को ऋषि के हवाले कर दिया। फिरप्रभु माता के महल में गए और उनके चरणों में सिर नवाकर चले॥208 (क)॥

सोरठा :

*** पुरुष सिंह दोउ बीर हरषि चले मुनि भय हरन। कृपासिंधु मतिधीर अखिल बिस्व कारन करन॥208 ख॥

भावार्थ:

-पुरुषों में सिंह रूप दोनों भाई (राम-लक्ष्मण) मुनि का भय हरने के लिए प्रसन्न होकर चले। वे कृपा के समुद्र, धीर बुद्धि और सम्पूर्ण विश्व के कारण के भी कारण हैं॥208 (ख)॥

चौपाई :

*** अरुन नयन उर बाहु बिसाला। नील जलज तनु स्याम तमाला॥ कटि पट पीत कसें बर भाथा। रुचिर चाप सायक दुहुँ हाथा॥1॥

भावार्थ:

-भगवान के लाल नेत्र हैं, चौड़ी छाती और विशाल भुजाएँ हैं, नील कमल और तमाल के वृक्ष की तरह श्याम शरीर है, कमर में पीताम्बर (पहने) और सुंदर तरकस कसे हुए हैं। दोनों हाथों में (क्रमशः) सुंदर धनुष और बाण हैं॥1॥

*** स्याम गौर सुंदर दोउ भाई। बिस्वामित्र महानिधि पाई॥ प्रभु ब्रह्मन्यदेव मैं जाना। मोहि निति पिता तजेउ भगवाना॥2॥

भावार्थ:

-श्याम और गौर वर्ण के दोनों भाई परम सुंदर हैं। विश्वामित्रजी को महान निधि प्राप्त हो गई। (वे सोचने लगे-) मैं जान गया कि प्रभु ब्रह्मण्यदेव (ब्राह्मणों के भक्त) हैं। मेरे लिए भगवान ने अपने पिता को भी छोड़ दिया॥2॥

*** चले जात मुनि दीन्हि देखाई। सुनि ताड़का क्रोध करि धाई॥ एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा। दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा॥3॥

भावार्थ:

-मार्ग में चले जाते हुए मुनि ने ताड़का को दिखलाया। शब्द सुनते ही वह क्रोध करकेदौड़ी। श्री रामजी ने एक ही बाण से उसके प्राण हर लिए और दीन जानकर उसको निजपद (अपना दिव्य स्वरूप) दिया॥3॥

*** तब रिषि निज नाथहि जियँ चीन्ही। बिद्यानिधि कहुँ बिद्या दीन्ही॥ जाते लाग न छुधा पिपासा। अतुलित बल तनु तेज प्रकासा॥4॥

भावार्थ:

-तब ऋषि विश्वामित्र ने प्रभु को मन में विद्या का भंडार समझते हुए भी (लीला को पूर्ण करने के लिए) ऐसी विद्या दी, जिससे भूख-प्यास न लगे और शरीर में अतुलित बल और तेज का प्रकाश हो॥4॥ विश्वामित्र-यज्ञ की रक्षा

दोहा :

*** आयुध सर्ब समर्पि कै प्रभु निज आश्रम आनि। कंद मूल फल भोजन दीन्ह भगति हित जानि॥209॥

भावार्थ:

-सब अस्त्र-शस्त्र समर्पण करके मुनि प्रभु श्री रामजी को अपने आश्रम में ले आए और उन्हें परम हितू जानकर भक्तिपूर्वक कंद, मूल और फल का भोजन कराया॥209॥

चौपाई :

***प्रात कहा मुनि सन रघुराई। निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई॥ होम करन लागे मुनि झारी। आपु रहे मख कीं रखवारी॥1॥

भावार्थ:

-सबेरे श्री रघुनाथजी ने मुनि से कहा- आप जाकर निडर होकर यज्ञ कीजिए। यह सुनकर सब मुनि हवन करने लगे। आप (श्री रामजी) यज्ञ की रखवाली पर रहे॥1॥

*** सुनि मारीच निसाचर क्रोही। लै सहाय धावा मुनिद्रोही॥ बिनु फर बान राम तेहि मारा। सत जोजन गा सागर पारा॥2॥

भावार्थ:

-यह समाचार सुनकर मुनियों का शत्रु कोरथी राक्षस मारीच अपने सहायकों को लेकरदौड़ा। श्री

रामजी ने बिना फल वाला बाण उसको मारा, जिससे वह सौ योजन के विस्तार वाले समुद्र के पार जा गिरा॥2॥

*** पावक सर सुबाहु पुनि मारा। अनुज निसाचर कटकु सँघारा॥ मारि असुर द्विज निर्भयकारी। अस्तुति करहिं देव मुनि झारी॥3॥

भावार्थ:

-फिर सुबाहु को अग्निबाण मारा। इधर छोटे भई लक्ष्मणजी ने राक्षसों की सेना का संहार कर डाला। इस प्रकार श्री रामजी ने राक्षसों को मारकर ब्राह्मणों को निर्भय कर दिया। तब सारे देवता और मुनि स्तुति करने लगे॥3॥

*** तहँ पुनि कछुक दिवस रघुराया। रहे कीन्हि बिप्रन्ह पर दाया॥ भगति हेतु बहुत कथा पुराना। कहे बिप्र जद्यपि प्रभु जाना॥4॥

भावार्थ:

-श्री रघुनाथजी ने वहाँ कुछ दिन और रहकर ब्राह्मणों पर दया की। भक्ति के कारण ब्राह्मणों ने उन्हें पुराणों की बहुत सी कथाएँ कहीं, यद्यपि प्रभु सब जानते थे॥4॥

*** तब मुनि सादर कहा बुझाई। चरित एक प्रभु देखिअ जाई॥ धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा। हरषि चले मुनिबर के साथा॥5॥

भावार्थ:

-तदन्तर मुनि ने आदरपूर्वक समझाकर कहा- हे प्रभो! चलकर एक चरित्र देखिए। रघुकुल के स्वामी श्री रामचन्द्रजी धनुषयज्ञ (की बात) सुनकर मुनिश्रेष्ठविश्वामित्रजी के साथ प्रसन्न होकर चले॥5॥ अहल्या उद्धार

*** आश्रम एक दीख मग माहीं। खग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं॥ पूछा मुनिहि सिला प्रभु देखी। सकल कथा मुनि कहा बिसेषी॥6॥

भावार्थ:

-मार्ग में एक आश्रम दिखाई पड़ा। वहाँ पशु-पक्षी, को भी जीव-जन्तु नहीं था। पत्थर की एक शिला को देखकर प्रभु ने पूछा, तब मुनि ने विस्तारपूर्वक सब कथा कही॥6॥

दोहा :

*** गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर। चरन कमल रज चाहति कृपा करहु रघुबीर॥210॥

भावार्थ:

-गौतम मुनि की स्त्री अहल्या शापवश पत्थर की देह धारण किए बड़े धीरज से आपके चरणकमलों की धूलि चाहती है। हे रघुवीर! इस पर कृपा कीजिए॥210॥

छन्द :

*** परसत पद पावन सोकनसावन प्रगट भई तपपुंज सही। देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही॥ अति प्रेम अधीरा पुलक शरीरा मुख नहिं आवइ बचन कही। अतिसय

बड़भागी चरनन्हि लागी जुगल नयन जलधार बही॥1॥

भावार्थ:

-श्री रामजी के पवित्र और शोक को नाश करने वाले चरणों का स्पर्श पाते ही सचमुच वह तपोमूर्ति अहल्या प्रकट हो गई। भक्तों को सुख देने वाले श्री रघुनाथजी को देखकर वह हाथ जोड़कर सामने खड़ी रह गई। अत्यन्त प्रेम के कारण वह अधीर हो गई। उसका शरीर पुलकित हो उठा, मुख से वचन कहने में नहीं आते थे। वह अत्यन्त बड़भागिनी अहल्या प्रभु के चरणों से लिपट गई और उसके दोनों नेत्रों से जल (प्रेम और आनंद के आँसुओं) की धारा बहने लगी॥1॥

*** धीरजु मन कीन्हा प्रभु कहुँ चीन्हा रघुपति कृपाँ भगति पाई। अति निर्मल बानी अस्तुति ठानी ग्यानगम्य जय रघुराई॥ मैं नारि अपावन प्रभु जग पावन रावन रिपु जन सुखदाई।राजीव बिलोचन भव भय मोचन पाहि पाहि सरनहिं आई॥2॥

भावार्थ:

-फिर उसने मन में धीरज धरकर प्रभु को पहचाना और श्री रघुनाथजी की कृपा से भक्तिप्राप्त की। तब अत्यन्त निर्मल वाणी से उसने (इस प्रकार) स्तुति प्रारंभ की- हे ज्ञान से जानने योग्य श्री रघुनाथजी! आपकी जय हो! मैं (सहज ही) अपवित्र स्त्री हूँ, और हे प्रभो! आप जगत को पवित्र करने वाले, भक्तों को सुख देने वाले और रावण के शत्रु हैं। हे कमलनयन! हे संसार (जन्म-मृत्यु) के भय से छुड़ाने वाले! मैं आपकी शरण आई हूँ, (मेरी) रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए॥2॥

*** मुनि श्राप जो दीन्हा अति भल कीन्हा परम अनुग्रह मैं माना। देखेउँ भरि लोचन हरि भव मोचन इहइ लाभ संकर जाना॥ बिनती प्रभु मोरी मैं मति भोरी नाथ न मागउँ बर आना। पद कमल परागा रस अनुरागा मम मन मधुप करै पाना॥3॥

भावार्थ:

-मुनि ने जो मुझे शाप दिया, सो बहुत ही अच्छा किया। मैं उसे अत्यन्त अनुग्रह (करके) मानती हूँ कि जिसके कारण मैंने संसार से छुड़ाने वाले श्री हरि (आप) को नेत्र भरकर देखा। इसी (आपके दर्शन) को शंकरजी सबसे बड़ा लाभ समझते हैं। हे प्रभो! मैं बुद्धि की बड़ी भोली हूँ, मेरी एक विनती है। हे नाथ ! मैं और कोई वर नहीं माँगती, केवल यही चाहती हूँ कि मेरा मन रूपी भौंरा आपके चरण-कमल की रज के प्रेमरूपी रस का सदा पान करता रहे॥3॥

*** जेहिं पद सुरसरिता परम पुनीता प्रगट भई सिव सीस धरी। सोई पद पंकज जेहि पूजत अज मम सिर धरेउ कृपाल हरी॥ एहि भाँति सिधारी गौतम नारी बार बार हरि चरन परी। जो अति मन भावा सो बरु पावा गै पति लोक अनंद भरी॥4॥

भावार्थ:

-जिन चरणों से परमपवित्र देवनदी गंगाजी प्रकट हुईं, जिन्हें शिवजी ने सिर पर धारण किया और जिन चरणकमलों को ब्रह्माजी पूजते हैं, कृपालु हरि (आप) ने उन्हीं को मेरे सिर पर रखा। इस प्रकार (स्तुति करती हुई) बार-बार भगवान के चरणों में गिरकर, जो मन को बहुत ही अच्छा लगा,

उस वर को पाकर गौतम की स्त्री अहल्या आनंद में भरी हुई पतिलोक को चली गई॥4॥

दोहा :

*** अस प्रभु दीनबंधु हरि कारन रहित दयाल। तुलसिदास सठ तेहि भजु छाड़ि कपट जंजाल॥211॥

भावार्थ:

-प्रभु श्री रामचन्द्रजी ऐसे दीनबंधु और बिना ही कारण दया करने वाले हैं। तुलसीदासजी कहते हैं, हे शठ (मन)! तू कपट-जंजाल छोड़कर उन्हीं का भजन कर॥211॥ **अगला पेज...**

रामचरित्मानस

बालकाण्ड

मासपारायण, सातवाँ विश्राम